शरीअत क्या है?

क्या इसमें बदलाव सम्भव है? शरीअत, कुरान और हदीस पर आधारित है। लेकिन इसमें मानवीय व्याख्या भी शामिल है। कौन सी हदीस मानेंगे या नहीं मानेंगे, यह भी आदमी के फैसले पर निर्भर है। यहाँ तक कि कुरान की समझ भी मानवीय निर्णय पर आधारित है। शरीअत को पूरी तरह डिवाइन (खुदाई) या अपरिवर्तनीय मानना सही नहीं है। शरीअत कुछ डिवाइन स्रोत पर आधारित है लेकिन उस डिवाइन स्रोत की समझ, मानवीय है। जिस हद तक वह मानवीय है, उसे बदला जा सकता है।

हदीस के सोर्स पर सवाल उठाया जा सकता है या नहीं? क्यों नहीं उठा सकते। सारे मसलक अलग-अलग इसीलिए हुए कि अलग-अलग मसलक के लोग अलग-अलग हदीसें इस्तेमाल करते हैं। जैसे अहले हदीस हैं, वो तीन तलाक को नहीं मानते। हदीस के हवाले से ही नहीं मानते हैं। दूसरे मसलक मानते हैं, वो भी हदीस के हवाले से मानते हैं... तो हदीस का मसला विवादास्पद है। मुसलमानों में एक मसलक ऐसा भी है, जो हदीस को पूरी तरह नकारता है। यह अहले कुरान कहलाते हैं।

यह भी सचाई है कि रसूल ने मना किया था कि हदीसें मत जमा करो, कल तुम इस पर लड़ोगे। हजरत अबु बक्र ने मना किया, हदीसें जमा मत करो। हजरत उमर के जमाने में ढाई-तीन साल तक हदीसों को स्वीकार नहीं किया जा रहा था। फिर शियों की हदीस अलग है। सुन्नियों की हदीस अलग है। बरेलवियों की अलग है। तो आप क्या करेंगे। आप फिर यह कैसे कहेंगे कि शरीअत खुदाई है। यहीं साबित हो जाता है कि शरीअत का बड़ा हिस्सा मानव निर्मित है। अगर आदमी ने शरीअत बनाया है तो उसे बदलना चाहिए। उस दौर में पैगम्बर से कई सवाल पूछे जाते थे, उसका वो जवाब देते थे। यह जवाब एक-दूसरे से आगे बढ़ी। वो ही हदीस है।

जब शरीअत लॉ का संग्रह किया जा रहा था, तो हदीसों का सहारा लिया गया। सुन्नी इस्लाम में शरीअत के चार स्रोत हैं- कुरान, हदीस, इज्मा और कियास। कियास यानी जब कोई चीज कुरान या हदीस में नहीं मिलती तो आप उस तरह के हालात के आधार पर समस्याओं का हल तलाशते हैं। जब यह काम हो गया तो इस हल के लिए आप आम सहमति पैदा करना चाहते हैं ताकि सब उसे स्वीकार कर लें। इसमें सिर्फ कुरान खुदाई है। हदीस, इज्मा और कियास मानव निर्मित है।

जब इतना हिस्सा शरीअत का मानव निर्मित है, तो उसमें बदलाव करना चाहिए। जैसे चार शादी का मसला है। कुरान ने कहीं नहीं कहा कि चार शादी करो, बल्कि सावधान किया कि मत करो। क्यों, क्योंकि तुमसे इंसाफ नहीं होगा। नामुमकिन है सभी बीवियों से इंसाफ करना।

इस पर कई हदीसें हैं। हदीसें इस्तेमाल कर-कर के इसे जायज बना लिया गया। इसीलिए शरीअत का कुछ हिस्सा खुदाई है तो कुछ हिस्सा मानव निर्मित। तो उस हद तक तो बदलाव होना चाहिए।कुरान जो मूल्य देता है, वह स्थाई है। बहुत सारी चीजें कुरान में संदर्भ के साथ, उस समय के हालात के मुताबिक है।

जैसे-दासता। उस वकत दास रखने की इजाजत देनी पड़ी क्योंकि हालात ऐसे थे लेकिन संकेत दे दिया कि यह होना नहीं चाहिए। हालांकि आज भी ऐसे उलमा हैं जो कहते हैं कि हमें हक है गुलाम रखने का। वो बेइमानी करते हैं, कुरान के साथ। उन चीजों को उठा लेते हैं, जहाँ गुलाम रखने की इजाजत है। उस चीज को छिपा लेते हैं, जहाँ इसे मानवीय सम्मान के खिलाफ बताया गया है। यह चयनित नजरिया है इसीलिए जब तक पूर्णता में कोई बात नहीं होगी तो दिक्कत होगी।

इकबाल अपने **'रिकंस्ट्रक्शन ऑफ रीलिजियस थॉट इन इस्लाम`** में बहुत साफ कहा है कि मुसलमानों की हर पीढ़ी को शरीअत के बारे में पुनर्विचार का अधिकार होना चाहिए। और शरीअत लॉ में बदलाव होना चाहिए। वह उसी समझ के तहत यह बात कह रहे थे कि सामाजिक जरूरत बदलती है। तुर्की में जो उस वक्त हो रहा था, उसका उन्होंने स्वागत किया। कमाल पाशा जो बदलाव ला रहे थे, वो उसकी काफी प्रशंसा कर रहे थे। उन्होंने कहा, जो काम पहले उलमा करते थे, उसे अब पार्लियामेंट को करना होगा। निर्वाचित प्रतिनिधि को करना होगा। वो लोग सामाजिक जरूरत के हिसाब से बदलाव के लिए आम सहमति पैदा करने का काम करेंगे। लेकिन उलमा इसे कभी तस्लीम नहीं करेंगे क्योंकि इससे उनकी लीडरशीप जाती है। एक मसला लीडरशीप का भी है। सारे मसलक के नेता जो आपस में लड़ते हैं, वो वास्तव में सत्ता की लड़ाई है। चाँद के मसले पर भी जो होता है, वह यही है।

मौलाना फतवे अपने-अपने मसलक (पंथ) के हिसाब से देते हैं। ससुर के बलात्कार की पीड़ित इमराना ने अपने बारे में दिये गये फतवे को नहीं माना। आज भी वह अपने शौहर के साथ रह रही है। शौहर ने भी नहीं माना उस फतवे को। अपनी बीवी को नहीं छोड़ा उसने। इसी से से हम समझ सकते हैं कि फतवा कितना बाध्यकारी है। फतवा महज एक राय है, जो किसी आलिम द्वारा किसी खास मसले पर दिया जाता है। कोई माने न माने, यह उसकी आजादी का सवाल है। इसीलिए कहा जाता है कि इस्लाम में प्रीस्टहूड नहीं है। कोई यह नहीं कह सकता कि फतवा मानना ही पड़ेगा।

बी एन शर्मा